सुविचार



अपने बड़े दुख को छोटा दुख तथा अपनी छोटी खुशी को बड़ी खुशी समझकर जीने में ही जिंदगी का आनंद है।

विभा गुप्ता बैंगलुरु

कहानी

सेवा

80 वर्ष की दहलीज पर खड़े जीर्णशीर्ण पिता। दो-तीन वर्ष पीछे खड़ी झुलसी हुई माताजी। इन पुराने मटेरियल्स के पड़े रहने का इंतजाम कबाड़ी वाले स्टोर रूम से सटे हुए एक छोटे-से रूम में ही किया गया था। उनके प्रति बेटे-बहू का व्यवहार बेहद औपचारिकता पूर्ण और लोकलाज बचाने की सीमा तक ही था। कारपोरेट सेक्टर की नौकरियों की कृपा से धन प्रचुर था, लेकिन बेटे-बहू के समय पर कंपनी का कड़ा पहरा होने के कारण माता-पिता बेटे-बहू के सानिध्य को तरसते थे। एक दिन एक बड़ी बीमारी का झोंका आया और 80 वर्ष का बरगद बेहोश हो गया। ब्लड प्रेशर अपनी पूरी सीमा



लाँघ गया था और दिमाग की नसों में जा घुसा था। आनन-फानन में सभी उन्हें कारपोरेट हॉस्पिटल लेकर दौड़े। फटाफट कई जाँचों को अंजाम दिया गया और बरगद जा पहुंचा आईसीयू में..! कारपोरेट हॉस्पिटल निश्चिन्त ! काउंटर पर दो लाख का एडवांस जमाकर बेटे को भी एक गुमान का अनुभव हुआ। अर्धचेतना में डूबी माँ ने पूछा, 'बेटा, पिता कैसे हैं ? क्या उन्हें होश आया ? तुम उनसे मिले ? उन्होंने कोई बात की ? ' इतने प्रश्नों का एक ही उत्तर, 'बड़ा हॉस्पिटल है। पूरा पैसा झोंक दिया है। नो टेंशन ! ' दिन बीतते गए। चुड़िया सुबह-शाम मिलने जाती। बरगद के इर्द-गिर्द न जाने कितनी जीवन रक्षक यन्त्र लगे थे, मगर माताजी को ये सभी भूत-प्रेत की तरह घेरकर बैठे हुए लगते। हिम्मत खोती माताजी ने एक दिन बेटे से पूछा, 'बेटा, सब सही तो है ? वे कबतक लौटकर आएंगे ? ' बेटे ने कहा, 'पुत्र की ओर पिता की सेवा में कोई कमी नहीं रहेगी। रोज एक लाख डिपाजिट कर रहा हूँ। ' माँ ने माथे पर हाथ रखकर खुद से पूछा, 'बस ! पैसे वहा दिये तो क्या सेवा हो गयी ? ' धीरे-धीरे बिल काफ़ी मोटा हो गया था। कारपोरेट अस्पताल पूर्ण संतुष्ट ! आखिर कहानी का पटाक्षेप हुआ। बरगद गिर गया ! जार-जार होकर बुढ़िया रोने लगी। आँसुओं के सागर में डूबकर उसने बेटे से पूछा, 'बेटा, तुमने यह कैसी सेवा की ? पिता तो चले गए !' बेटे ने एक तरह से विजय-घोष के स्वर में तथा कर्तव्य-पूर्ति के गुमान में कहा, 'माँ, सात दिन में सत्रह लाख खर्च कर दिये। अब कैसी सेवा चाहिए थी ? '

ज्ञानदेव मुकेश
कुर्जी, विकास नगर
पटना -800010

बेताल और पी के - 9



बेताल ने पी के से पूछा, 'बता पी के सोना-चाँदी के दाम लगातार कम क्यों हो रहे हैं ? ' पी के ने जवाब दिया, 'सो तो होना ही था बेताल जी। आपको याद होगा कि कुछ ही समय पहले प्रमुख विपक्षी दल के नेता ने आलू से सोना बनाने की बात कही थी। और इसके कुछ दिन बाद हमारे प्रधानमंत्री जी ने भी अगले कुछ महीनों तक तक सोना-चाँदी नहीं खरीदने के लिए कहा था।? मतलब साफ है उन्हें विश्वास था कि आलू से सोना बनेगा तो सोने-चाँदी की कीमतें कम होंगी ही। अब देखिए, सोने-चाँदी के दाम कैसे कम हो रहे हैं। ' बेताल फुर्र...।

-डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा
रायपुर, छत्तीसगढ़
9827914888

रोटी के दो छोर

किशोर नाथ और अम्बिकादेवी बरामदे में बैठे नाश्ता कर रहे थे। सामने मेज पर पराठे, दही, कटे हुए फल और दूध से भरा गिलास रखा था। अचानक हवा के झोंके से मेज पर रखा अखबार फड़फड़ाने लगा। अखबार के एक कोने में छपी खबर पर किशोर नाथ की नजर ठिठक गई– 'रोटी माँगने पर बेटे ने कर दी पिता की हत्या!' अम्बिकादेवी ने उनके चेहरे का भाव पढ़ते हुए पूछा, 'क्या हुआ? किस खबर पर नजर अटक गई? ' 'देखो अम्बिका! एक बेटा अपने ही पिता की हत्या सिर्फ इसलिए कर देता है कि पिता ने उससे रोटी माँग ली! '



अम्बिकादेवी का हाथ थाली पर ठिठक गया। 'आखिर रिश्तों में इतनी नफरत कहाँ से आ गई? जिसने उँगली पकड़कर चलना सिखाया, उसी पिता की जान लेने में बेटे का हाथ कैसे नहीं काँपा? ' किशोर नाथ ने गहरी साँस ली। 'सवाल सिर्फ बेटे की क्रूरता का नहीं है। क्या इसके पीछे बेरोजगारी, गरीबी, नशा या पारिवारिक कुंठा जैसी परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं? क्या बूढ़े माँ-बाप अब परिवार की जिम्मेदारी नहीं, बोझ समझे जाने लगे हैं? ' 'लेकिन अभाव किसी की हत्या का अधिकार तो नहीं दे सकता! ' 'बिल्कुल नहीं।

अपराध की जिम्मेदारी अपराधी की ही है। मगर समाज और व्यवस्था भी अपनी जिम्मेदारियों से मुँह नहीं मोड़ सकते। बुजुर्गों के लिए सम्मानजनक जीवन, युवाओं के लिए रोजगार और जरूरतमंदों के लिए सामाजिक सुरक्षा आखिर किसकी जिम्मेदारी है? ' अम्बिकादेवी ने उनकी थाली की ओर सरकाते हुए कहा, 'नाश्ता तो कर लीजिए, ठंडा हो रहा है। ' किशोर नाथ ने पराठे की ओर देखा। उनकी आँखों में एक अजीब-सी उदासी उतर आई। 'अम्बिका! रोटी तो पेट की जरूरत है, लेकिन रिश्तों को बचाने के लिए संवेदना भी चाहिए। जिस देश में रोटी के नाम पर वोट माँगे जाते हों, वहाँ कोई पिता रोटी माँगने पर अपनी जान न गँवाए, यह सुनिश्चित करना भी व्यवस्था का धर्म है। ' अम्बिकादेवी चुप थीं। सामने थाली में रखा नाश्ता अब दोनों को कुछ सवालों के साथ घूरता हुआ प्रतीत हो रहा था।

नन्दलाल भारती

खाली कुर्सी

व्यंग्य



तीसरी आँख



कभी-कभी किसी की अनुपस्थिति ही उसकी सबसे बड़ी उपस्थिति होती है। शहर के पुराने सामुदायिक भवन में आज कुछ असामान्य हलचल थी। दीवारों पर रंगीन पर्दे लगाए जा रहे थे। मंच पर फूलों की सजावट हो रही थी। सामने लगी बड़ी-सी तस्वीर पर माला चढ़ाई गई थी। तस्वीर थी–सेवानिवृत्त डाकिया हरिराम की। आज उनकी पहली पुण्यतिथि पर नगर परिषद ने उन्हें मरणोपरांत सम्मानित करने का निर्णय लिया था। मंच के सामने पहली पंक्ति में एक कुर्सी खाली रखी गई थी। उस पर सफेद कपड़ा बिछा था और एक छोटा-सा कागज रखा था– 'हरिराम जी के लिए।' कार्यक्रम में शहर के कई प्रतिष्ठित लोग आए थे। भाषणों का सिलसिला शुरू हुआ। नगर अध्यक्ष ने कहा, 'हरिराम जी ने अपने जीवन के चालीस वर्ष समाज की सेवा में लगा दिए। वे केवल चिट्ठियाँ नहीं बाँटते थे, बल्कि लोगों के बीच रिश्तों का सेतु बनाते थे। ' तालियाँ बजीं। एक स्थानीय व्यापारी ने कहा, 'आज के डिजिटल युग में डाकिए का महत्व भले कम हो गया हो, लेकिन हरिराम जी जैसे लोग कभी भुलाए नहीं जा सकते। ' फिर तालियाँ बजीं। इसी बीच सभागार के अंतिम दरवाजे से एक दुबली-पतली लड़की अंदर आई। उसके हाथ में पुराना-सा लिफाफा था। उसने मंच की ओर देखा और चुपचाप उस खाली कुर्सी के पास जाकर खड़ी हो गई। आयोजकों ने उसे हटाने की कोशिश की। 'बेटी, यह कुर्सी अतिथियों के लिए है। ' लड़की ने धीमे स्वर में कहा, 'मुझे पता है। मैं बस यह चिट्ठी यहाँ रखना चाहती हूँ। ' 'किसकी चिट्ठी है? ' 'हरिराम डाकिया की। ' आयोजक चौंक गया। 'लेकिन वे तो अब इस दुनिया में नहीं हैं।' लड़की ने पहली बार उसकी आँखों में देखा। 'इसीलिए तो लाई हूँ। ' करीब पच्चीस वर्ष पहले शहर की पुरानी डाकघर इमारत में हरिराम काम करते थे। उनकी साइकिल की घंटी सुनते ही बच्चे गलियों में दौड़ पड़ते थे। किसी के लिए नौकरी का नियुक्ति पत्र होता, किसी के लिए बेटे की चिट्ठी, किसी के लिए मनीऑर्डर और किसी के लिए बरसों से बिछुड़े रिश्ते का संदेश। हरिराम की एक आदत थी। वे कभी किसी चिट्ठी को केवल कागज नहीं समझते थे। एक बार किसी घर में बेटी की शादी का निमंत्रण पहुँचाते तो खुद भी मुस्करा देते। किसी घर में मृत्यु का समाचार लेकर जाते तो कुछ देर दरवाजे पर चुपचाप खड़े रहते। उनका मानना था कि डाकिया लोगों के घरों तक नहीं, उनकी भावनाओं तक पहुँचता है। एक दिन उनकी मुलाकात दस वर्षीय नंदिनी से हुई। नंदिनी सरकारी विद्यालय में पढ़ती थी। उसके पिता जेल में थे और माँ लोगों के घरों में काम करती थी। घर में गरीबी थी, लेकिन लड़की की आँखों में सपने बहुत थे। वह रोज डाकघर के बाहर बैठकर हरिराम को चिट्ठियाँ छाँटते देखा करती थी। एक दिन उसने पूछा, 'बाबा, क्या चिट्ठी से कोई दूर बैठा इंसान पास आ सकता है? ' हरिराम हँस पड़े। 'कभी-कभी तो चिट्ठी वह कह जाती है, जो सामने बैठा इंसान भी नहीं कह पाता। ' नंदिनी ने अपनी जेब से एक मुड़ा हुआ कागज निकाला। 'तो क्या आप मेरी एक चिट्ठी पहुँचा देंगे? ' 'कहाँ? ' 'अपने पापा के पास। ' हरिराम ने कागज लिया। उस पर टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखा था– 'पापा, आप जेल से कब आओगे? माँ रोज रोती है। मैंने इस बार कक्षा में पहला स्थान पाया है। आप होते तो मिठाई जरूर लाते।' हरिराम की आँखें भर आईं। उन्होंने पूछा, 'पता क्या लिखना है? ' नंदिनी ने सिर हिलाया। 'नहीं, लेकिन आपको तो पता होगा न, जेल कहाँ होती है? ' हरिराम ने उस दिन उसे पहली बार अपने पास बैठाकर चिट्ठी लिखना सिखाया। कुछ महीने बाद नंदिनी की माँ बीमार पड़ गई। घर चलाने की जिम्मेदारी बच्ची पर आ गई। स्कूल छूट गया। हरिराम को जब पता चला तो वे उसके घर पहुँचे। 'नंदिनी स्कूल क्यों नहीं जा रही? ' माँ ने कहा, 'साहब, पेट की आग पहले बुझाएँ या किताबों की? ' हरिराम ने कुछ नहीं कहा। अगले दिन से नंदिनी की फीस, किताबें और कॉपियाँ किसी अनजान दानदाता के नाम से विद्यालय पहुँचने लगीं। नंदिनी पढ़ने लगी। उसे कभी पता नहीं चला कि

उसकी मदद कौन कर रहा है। समय बीतता गया। हरिराम सेवानिवृत्त हो गए। अब उनके पास न साइकिल थी, न डाकघर की जिम्मेदारी। लेकिन उनकी मेज पर रोज कुछ न कुछ चिट्ठियाँ रखी रहतीं। वे आसपास के बच्चों को पढ़ाते और चुनुर्गों के लिए उनके दूर रहने वाले बच्चों को पत्र लिखते। कई बार लोग कहते, 'बाबा, अब कौन चिट्ठियाँ लिखता है? मोबाइल का जमाना है। ' वे मुस्कराकर कहते, 'मोबाइल पर लोग हाल पूछते हैं, चिट्ठियों में लोग अपना हाल लिखते हैं। ' एक दिन नंदिनी उनके घर पहुँची। अब वह बड़ी हो चुकी थी और कॉलेज में पढ़ रही थी। उसने बताया कि उसका चयन छात्रवृत्ति के लिए हुआ है। वह आगे पढ़ना चाहती है। हरिराम बहुत खुश हुए।

नंदिनी ने पूछा, 'बाबा, आपने मेरी इतनी मदद क्यों की? ' हरिराम कुछ देर चुप रहे। फिर बोले, 'क्योंकि कभी किसी ने मेरी भी मदद की थी। ' नंदिनी ने उत्सुकता से पूछा, 'किसने? ' हरिराम ने अलमारी से एक पुराना लिफाफा निकाला। उस पर लिखा था– 'हरिराम के नाम।'

उसके भीतर एक पोस्टकार्ड था। उसपर लिखा था– 'बेटा, तुम्हारी चिट्ठी मिली। पढ़कर लगा कि तुम्हारे पिता ने जो सपना देखा था, वह अधूरा नहीं रहेगा। मैं हर महीने कुछ पैसे भेजता रहूँगा। तुम मन लगाकर पढ़ना। एक दिन तुम्हें अपने पैरों पर खड़ा होना है।' हरिराम ने धीरे से कहा, 'बाबा, आज मैं आपकी आखिरी चिट्ठी पढ़ने आई थी। ' फिर उसने अपने बैग से एक और कागज निकाला। वह हरिराम के नाम लिखी उसकी अपनी चिट्ठी थी। उसमें लिखा था– 'बाबा, आपने मुझे उस समय सहारा दिया, जब मेरे पास अपना कहने वाला कोई नहीं था। आज मैं उन बच्चों के लिए एक निःशुल्क कानूनी सहायता केंद्र शुरू कर रही हूँ, जिनके माता-पिता गरीबी या परिस्थितियों के कारण न्याय से दूर रह जाते हैं। आपने मुझे किताबें दी थीं। मैं कोशिश करूँगी कि किसी बच्चे का भविष्य किसी मजबूरी की भेंट न चढ़े। आपकी नंदिनी।' उसने चिट्ठी खाली कुर्सी पर रख दी। तभी कार्यक्रम के आयोजक ने पूछा, 'बेटी, अब यह कुर्सी हटा दें? ' नंदिनी ने कुर्सी की ओर देखा और कहा– 'नहीं साहब, इसे यहीं रहने दीजिए। इस शहर में बहुत लोग हैं, जिन्हें किसी ऐसे इंसान की जरूरत है, जो उनके लिए कुछ देर खाली बैठ सके। ' उस दिन के बाद सामुदायिक भवन में वह कुर्सी कभी नहीं हटाई गई।

उस पर कोई नाम नहीं लिखा गया। क्योंकि हरिराम अब किसी एक व्यक्ति के नहीं रहे थे। वे उन सभी लोगों के हो गए थे, जिनके जीवन में कोई चिट्ठी कभी पहुँची ही नहीं। और शायद यही किसी इंसान की सबसे बड़ी उपलब्धि है–उसके जाने के बाद भी दुनिया में कुछ कुर्सियाँ उसके इंतजार में खाली रहें।

मुकेश कुमार बिस्सा
जैसलमेर

कहानी

तीसरी पीढ़ी

नेताजी गांव में गरीबु के घर आते ही बोले-' गरीबु राम कैसे हो ?क्या कमा- बता रहे हो? ' अंदर से आवाज सुन गरीबु निकला। हाथ जोड़े हुए बोला-' आओ आओ नेताजी आओ, गरीब के घर में भगवान आए हैं । ' और फिर उसने आंगन में चारपाई बिछा दी। नेताजी चारपाई पर विराजमान हो गए। उनके साथ आठ-दस लोग और भी थे। गरीबु ने उन्हें भी आसान देकर बिठा दिया। नेताजी गरीबु के घर परिवार के बारे में पूछते पूछते डोर डंगरों तक पहुंच गए। 'गरीबु राम कितनी भैंसें पाली हैं ? ' 'जी दो भैंसें हैं।' गरीबु ने जवाब दिया। नेताजी बोले -' दूध भी देती हैं क्या? आज तो हम तेरे पास चाय नहीं दूध ही पियेंगे । ' 'जी - जी दोनों दूध देती हैं ,आपको दूध पिलाता हूं । '

' और उसने घरवाली को जैसे ही आवाज दी तो अंदर से उसका ग्रेजुएट पोता बाहर निकला जो हाल ही में पढ़कर आया था। उसने नेताजी पर सवाल पर सवाल दागने शुरू कर दिए। वह बोला-' आपको कई सालों से देखता आ रहा हूं। हर बार आकर जब आप भैंसों के बारे में ही पूछते हो तो दादा जी खुश होकर कई कई दिनों तक



और उसने घरवाली को जैसे ही आवाज दी तो अंदर से उसका ग्रेजुएट पोता बाहर निकला जो हाल ही में पढ़कर आया था। उसने नेताजी पर सवाल पर सवाल दागने शुरू कर दिए।

आपकी इसी बात में मग्न रहते हैं कि नेताजी हमारे कितने शुभचिंतक हैं जो हमारे परिवार ही नहीं , डोर डंगरों तक के बारे में भी हमसे बतियाते हैं । फिर इसकी एवज में ये पूरे परिवार से आपको वोट देने के लिए कहते हैं। क्या कभी आपने सोचा है कि आप जिन भैंसों के बारे में पूछ कर दादा जी को बरगलाते हो उन भैंसों को गांवों से लाने का रास्ता कैसा है? दुर्गम पहाड़ी रास्तों के कारण कई भैंसें तो रास्ते में ही गिर कर मर जाती हैं । गरीब किसान कर्ज में दब जाते हैं ।उम्र भर वह कर्ज उनसे नहीं उतारा जाता। इतने वर्षों में भी आपको गांव की कोई कठिनाई नजर नहीं आई। खूटे पर बनी भैंस आपको हर बार दिख जाती है वह भी चुनाव के दिनों में...। ' लड़के की बातें सुन नेताजी उखड़ गए। बोले-' गरीबु राम तेरा पोता बहुत बातें करने लगा पड़ा है इसे थोड़े संस्कार दो।' तभी लड़का बोला - 'नेता जी आपको

देखते हुए ही गांव की तीसरी पीढ़ी जवान हो गई है। अब गांव को अनपढ़ मानकर बरगलाने के दिन गए। हम अपना हक लेना जानते हैं और हां इस बार तुम्हारे खिलाफ मैं भी चुनाव लड़ रहा हूं। ' नेताजी के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं ।वह बिना दूध पिए अपने वकीरों के साथ वहां से चल दिए । पीछे गरीबु आवाजें लगाता रहा , 'नेता जी आप बच्चे की बातों का बुरा मान गए दूध पीकर जाओ, दूध पीकर जाओ। ' परंतु नेताजी ने मुड़कर नहीं देखा।

अशोक दर्द
डलहौजी चंबा हिमाचल प्रदेश

सब से बड़े दानदाता

सुबह आंख खुलते ही मोबाइल खोला। फेसबुक खुलते ही पता चला कि अमर लाल मर गए। रात तक अच्छे भले थे। सुबह होने से पहले ही बुला लिया ऊपर वाले ने। मामूली आदमी नहीं थे अमर लाल। शहर के नामचीन धनाढ्य लोगों में होती थी उनकी गिनती। दिन-रात दीन-दुनिया से बेखबर। बाप का दिवाला पिटने के बाद से उलझे थे कारोबारी डंडे-सट्टे में। चापलूसी और धूर्तता विरासत में मिली थी। फिर से अमीर बनते देर नहीं लगी। दोफर



तक पता चला कि सब से बड़े दान-दाता निकले अमर लाल। मरने से पहले दो मॉल, तीन फेक्ट्री, दो आलीशान बंगलों सहित करोड़ों की जमीन-जायदाद दान कर गए चुपचाप। अपने इकलौते सपूत के नाम। जो उन्हें पीठ पीछे नहीं मुंह पर गलियाता रहा जीते जी। इकलौता होने के विशेषाधिकार का लाभ उठाते हुए। बिल्कुल उन्हीं की तरह। कुछ भी साथ ले जाने का परमिट नहीं था ना। शायद इसी लिए मजबूर हुए धृतराष्ट्र के कलियुगी अवतार अमर लाल। अपनी वसीयत दुर्योधन के लेटेस्ट वर्जन अपने सपूत के नाम करने पर। मोहतल भी नहीं मिली मरने से पहले फेर-बदल की। अपनी पुश्तैनी फ़ितरत व रिवायत के मुताबिक। वो खुद कौन से श्रवण कुमार रहे दौलत के खुमार में मस्त अपने बाप के। बस इसीलिए छोड़ गए सब कुछ। अब सब कुछ धरा पर धरा हुआ है। हमेशा घमंड के आसमान में उड़ने वाले अमर लाल का बेडोल सा शरीर भी।

प्रणय प्रभात (मध्यप्रदेश)

कहानी

दीमक

लक्ष्मी एक मजदूर औरत है, सावला सा रंग, किंतु घाघरा चोली में खूब फबती है। वह इमारत में लकड़ी की खिड़कियां लगाने का काम करती है, ठेकेदार सदैव इसलिए उसे काम दिलवाता था, क्योंकि वह अन्य मजदूरों की अपेक्षा बहुत सफाई से काम करती थी।

इस बार उसे अपनी झुग्गी के बिल्कुल सामने वाली इमारत की सातवीं मंजिल के फ्लैट में काम मिला था। फ्लैट की सारी खिड़कियों में दीमक लग गई थी, इसलिए मालिक उन्हें बदलवा रहा था। काम करते-करते सदैव लक्ष्मी सोचती, 'दीमक कहाँ है? दिखती तो है नहीं, बस अंदर ही अंदर चलती रहती है, जब तक लकड़ी खोखली न हो जाए। ' उस दिन ठेकेदार इमारत के मालिक के साथ बात कर रहा था, तो उसने कहा, 'ये मजदूर भी दीमक जैसे हैं सर जी। दिखते नहीं, पर बिल्डिंग खा जाते हैं, सीमेंट चोरी, ईंट चोरी और कामचोरी। ' लक्ष्मी को वो बात चुभ गई। उसने ठेकेदार की तरफ देखकर अपनी भौवें सिकोड़ी। वो सातवीं मंजिल पर थी, फ्लैट नंबर 305, उसकी 11वीं खिड़की, कांच लगाना बाकी था।

कांच इतना साफ था कि आर-पार उसकी अपनी झुंगी दिख रही थी। उसने अपनी झुग्गी को देखने के लिए कांच पर हथेली रखी, पांच उंगलियों के निशान। 'ए! गंदा कर दिया!' पीछे से फ्लैट का नया मालिक चिल्लाया, 'तुम लोग दीमक की तरह हो, जहाँ जाओ, गंदा करके आओ।

लाखों का फ्लैट है ये, पता भी है? ' लक्ष्मी ने हाथ नहीं हटाया, बल्कि मालिक से ही पूछ लिया, 'साहब, आपने कभी दीमक देखी है? ' मालिक थोड़ा चकराया, 'क्या? ' लक्ष्मी फिर बोली, 'दीमक दिखती नहीं साहब, जो दिखता है वो उसका किया हुआ दिखता है - जाली, मिट्टी, खोखली लकड़ी, हम भी वैसे ही हैं। '

लक्ष्मी ने फ्रेम के कोने पर दिखाया, जहाँ उसकी छेनी से



एक छोटा सा कट लग गया था।

'ये दीवार देख रहे हो? इसमें मेरी थापी के निशान हैं, इस मसाले में मेरे हाथ का पानी है, ये खिड़की का लेवल मैंने देखा है, साहूल मैंने मिलाया है, आप जब इस घर में रहोगे, तो आपको ये सब नहीं दिखेगा, आपको बस पेंट दिखेगा, कांच दिखेगा, जैसे लकड़ी में दीमक नहीं दिखती, पर अगर हम न होते, तो ये

दीवार खड़ी ही नहीं होती, हम दीमक नहीं हैं साहब, हम वो कील हैं जो लकड़ी को जोड़े रखती है, किंतु वह जोड़ने वाली कील दिखती नहीं।

' ठेकेदार चिल्लाता हुआ ऊपर आ गया, लक्ष्मी जानती थी, अब उसे नीचे जाना होगा, जाने से पहले उसने अपने घाघरे की जेब से एक लाल बिंदी निकाली। उसने उस बिंदी को कांच की पुट्टी के अंदर, सबसे कोने में दबा दिया। 'ये क्या कर रही है?' मालिक ने फिर टोका। 'दीमक छोड़ रही हूँ साहब। ' लक्ष्मी मुस्कुराई, पहली बार उसकी मुस्कान में गुस्सा नहीं, गर्व था।

'आप दवाई छिड़क कर दीमक को मार सकते हो, पर मेरी इस बिंदी को नहीं निकाल सकते, ये यहीं रहेगी, पुट्टी के अंदर, जब आप पर्दा लगाओगे, सोफा लगाओगे, तब भी ये यहीं रहेगी, किंतु घबराइए नहीं साहब क्योंकि यह बिंदी दीमक नहीं है। ' नीचे बबलू (पति) इंतज़ार कर रहा था, हाथ में वही पुराना पीला हेलमेट लिए।

'हो गया?' उसने पूछा। 'हाँ,' लक्ष्मी ने कहा। 'हिसाब किताब हो गया?' बबलू ने पूछा। लक्ष्मी ने घाघरे की जेब थपथपाते हुए कहा, 'हाँ। ' फ़िर दोनों बाइक पर बैठे और अपनी झुंगी की ओर चल दिये।

लक्ष्मी रात को सोते समय अपनी झुग्गी से उस इमारत को देख रही थी, जिसकी उसने खिड़की लगाई थी। इमारत के मालिक ने लाइट जलाई, शायद! वह मजदूरों के किये हुए काम का निरीक्षण कर रहा था, खिड़की की रोशनी को देखते देखते अचानक लक्ष्मी को ठेकेदार और मालिक की दीमक वाली बात याद आ गई।

किंतु, उसके अधरों पर हल्की सी मुस्कुराहट थी, और मन ही मन में सोच रही थी, 'हम मजदूर दीमक नहीं है, जो सब कुछ खोखला कर देते हैं, हम तो वो कील हैं जो सब कुछ जोड़ कर दूसरों के लिए आशियाना तैयार करते हैं। ' उसे गर्व था कि कई वर्षों पश्चात जब उस खिड़की में दीमक लगेगी और वह सारी खिड़की को खोखला कर देगी, किंतु उसकी बिंदी बिल्कुल वैसे ही रहेगी, बेदाग, बिना किसी को नुकसान पहुंचाए।

रचना चंदेल 'माही जिला बिलासपुर हिमाचल प्रदेश